सत्य सुन्दर नहीं होता

सत्य सुन्दर नहीं होता
सत्य कुरूप है, भयानक है
युद्ध की आग है सत्य
भूचाल का ताँडव है सत्य
अकाल की बिमारी है सत्य
भूख की लाचारी है सत्य
बाढ़ का प्रकोप है सत्य
आततायी का आक्रोश है सत्य
राजनीती की चाल है सत्य
षड़यँत्र का कमाल है सत्य
सत्य सुन्दर नहीं होता

सौंदर्य भ्रम है, छलावा है
मिथ्या है, माया है
क्षण भर का गौरव है
जीने का बहाना है
नशा है, मय है
शिराओं में दौड़ता
हृदय गुद्गुदाता, धड़कनें खनकाता
जीवन संगीत बनता है
लेकिन सत्य नहीं होता !

अशोक शर्मा

शब्द मुक्त

जो सुनाई देता है
वह शोर है
जो दिखाई देता है
वह मिथ्या है
जो सुगन्ध से पनपता है
वह भ्रम है
जो स्पर्श से उपजता है
वह मोह है
जो कंठ में गर्भित है
वह विष है !

मैं हूँ, पर नश्वर हूँ
मेरी हर खुशी
क्षण भर की है
शाश्वत है केवल
मृत्यु और वर्तमान

मेरे प्रश्न अनेक हैं
उत्तर कोई नहीं
कोई कहता है
भीतर उतरो
अपने अंदर झाँको
बाहर केवल भटकन है

आँखें बंद करो और देखो
मौन का नाद सुनो
निराकार का स्पर्श करो
आनन्द का अमृत पीयो

कँठ में विष धारण किए
अमृत कैसे पीऊँ
शब्द जाल में उलझा
कब तक चलूँ

प्रार्थी हूँ कि बन्धन कटे
शब्द मुक्त हूँ
और शोर हटे !

अशोक शर्मा

चाँद – एक मिल मज़दूर

अशोक शर्मा

काँधे पे कुदाल लिए
हाथों में मशाल लिए
सहमे सहमे कदमों से
जो शख्स हर रोज़
मेरी छत से गुज़रता है
वह एक मिल मज़दूर है

न हिन्दु, न मुसलमान, न ईसाई
उसका कोई धर्म नहीं
चाँद, माहताब, मून,
किसी भी नाम से बुलाइए
बात करता है

सदियों से एक ही काम
हर रोज़ १२ घंटे नाइट शिफ्ट
न तरक्की, न तबदीली,
अमावस के दिन
महीने में एक छुट्टी

खुराक खैरात में नहीं बंटती
पगार से पेट नहीं भरता
चाँद का चेहरा पीला पड़ गया है
थका-थका सा रहता है

शहर के उस पार
जहाँ, न पाँव तले ज़मीन है
न सर पे आसमान
एक गंदी, बदबुदार गली में
रहता है चाँद

दिन भर मुँह ढक सोता है
साँझ ढलते ही
काँधे पे कुदाल लिए
हाथों में मशाल लिए
निकल पड़ता है चाँद
एक और नाइट शिफ्ट के लिए !

मैं और तुम

पता नहीं कब
मैं और तुम दोनों
सर्वनाम हो गए
संज्ञा की जगह
प्रयोग किए जाने वाले
संज्ञाहीन शब्द ।

बचपन के छोटे नाम
अनास्थाओं की धूल में
अभिमान की परतों में
जाने कहाँ छूट गए ।

मेरा समर्पण, तुम्हारा अहंकार
तुम्हारा समर्पण, मेरा अहंकार
जैसे एक ही नाव के दो सवार
विपरीत दिशाओं में चलाते हों
अपनी पतवार ।

प्यार की नाव
अहंकार के भँवर में
कब टूटी, कब डूबी
पता नहीं चला ।

आबादी से दूर, चट्टानों के
बीच,
रेत में मुहँ छिपाये
उसी नाव के
पड़े हैं कुछ अवशेष
जिन पर लिखा है
तुम्हारा मेरा नाम ।

वर्षों बाद
शायद यही अवशेष
शंख बन, सीपी बन,
जन्म लें
रेत के घरोंदों में
और फिर मिल सके
तुम्हें और मुझे
कोई अमिट संज्ञा
कोई प्यार भरा नाम ।

जब मैं छोटा था

जब मैं छोटा था
तो हर चीज़ बड़ी लगती थी
तंग गलियों में
यूँ ही दौड़ के थक जाता था
सिर्फ एक वक्त का
रेशम था मेरे पाँव में
मेरी हर चोट को, हर दर्द को
सहलाता था

सीड़ियाँ चढ़ के गुज़रे सालों की
आँख जब देखती ऊँचाई से
हर एक चीज़ छोटी लगती है
एक अपने बेबाक कद के सिवा
मेरे अहम की एक बुलंदी है
एक अपना वजूद है मेरा

सिर्फ रेशम नहीं है पाँव में
वक्त टूटा हुआ सा जूता है
जो घिसटता वीरान सड़कों पर
और नए ज़ख्म दिए जाता है ।

*****

-- अशोक शर्मा

वह जो बूँद बूँद बह गया

वह जो बूँद बूँद बह गया
नयन की कोरों से
मर्म था मृदुल मन का
वह जो अंजुरी भर भर छलक गया
हंसी की हिलोरों में
उल्लास था, उफान था अन्तर मन का
वह जो क्रोध में, उन्माद में
झाग बन, फेन बन बिखर गया
आहत् अह्म था अन्तर द्वंद का
इसी तरह मैं जिया
इसी तरह मैं रीता
इसी तरह मैं बीत गया
दोपहर के लम्बे क्षण सा
सूखी नदी सा
पतझड़ के वृक्ष सा

अब लुड़कता खनकता
पहाड़ी पहाड़ी ढलकता
झरने झरने ठहरता
शायद पहुँचूँ
अविरल धार के नीचे
बह जाऊँ, भर जाऊँ
या रीत जाऊँ फिर ।

*****

-- अशोक शर्मा

लिखूँ भी तो क्या लिखूँ

लिखूँ भी तो क्या लिखूँ
हाथ हिलते नहीं हिलाए हुए
कलम की भी ज़ुबान सूख गयी
लफ़्ज़ सहमे हैं, चोट खाए हुए।

जब कोई बर्क शव में गिरती है
कुछ अंधेरों के चेहरे दिखते हैं
फिर कोई हरूफ आह बनता है
फिर कोई चीख़ सी निकलती है

बाद में फिर वही खामोशी है
आओ आवाज़ की गिरह खोलें
धड़कनों, घंटियों, आज़ानों से
आने वाली सुबह के लब खोलें

आओ हर लफ्ज़ पढ़ें दुआ की तरह
फिर से रहमो करम की बारिश हो
फिर से हाथों में कोई जुम्बिश हो
और कलम को फिर रवानी मिले ।

*****

-- अशोक शर्मा

गुनगुनी धूप हो उदासी हो

गुनगुनी धूप हो उदासी हो
या कोई ढलती शाम प्यासी हो
आओ फिर दिल से दिल की बात कहें
आँखें नम हों या हंसी फूट पड़े
आओ फिर से सहेज कर टुकड़े
ख्वाब के आइनों से बात करें

आओ इक बार फिर चलें कि जहाँ
हाथ से हाथ अपना छूटा था
सब्ज़ है या कि अब भी सहरा है
वह जहाँ प्यार अपना रूठा था
आँखों में भर के हमने ढाले जो
आओ उन मोतियों की बात करें

क्या कहीं कुछ कचोटता ही नहीं
क्या कभी आँख भर नहीं आती
या किसी टूटते से रिश्ते में
मेरी सूरत नज़र नहीं आती
सहज से हमने तुमने तोड़े जो
आओ उन वायदों की बात करें

वह जो झटकाया तुमने काँधे से
स्पर्श था मेरी गर्म बाहों का
या जिसे मुट्ठियों में भींच लिया
दर्द था मेरी सर्द आहों का
लाख कोशिश से जो नहीं छूटी

चलो परछाइयों की बात करें

वह जो सुख दुख के अपने साथी थे
कोरा काग़ज कलम अकेलापन
वह जो दिन रात साथ चलते रहे
धुप के पाँव तिमिर का सूनापन
साथ चलते रहे जो कांटों में
आओ उन दोस्तों की बात करें ।

गुनगुनी धूप हो उदासी हो
आओ फिर दिल से दिल की बात करें ।

****

अशोक शर्मा

रात तब भी नहीं होती

रात तब भी नहीं होती
जब मैं और मेरा सूरज
अपना चाँद
ढूँढ कर लाते हैं।

रात तब भी नहीं होती
जब मैं और मेरा चाँद
बचा खुचा सूरज
कूँए में ढकेल आते हैं।

रात तब भी नहीं होती
जब मैं और मेरा प्रेत
आशाओं के सारे जुगनूँ
ताबूत में डाल कर
दफन कर आते हैं।

अधखुली आँखों में
हज़ारों ख्वाब टिमटिमाते हैं
मुट्ठी भर ज़हन में
मायूसी के शोले
दहक दहक जाते हैं।

जिस्म है या मशाल है
उजाला है या आग है
रात होती ही नहीं ।

******

अशोक शर्मा

कविता

मैं शब्दों के करघे पर
भावनाओं के धागों से
एक कविता बुनता हूँ
उसे पहन कर इधर उधर
इठलाता फिरता हूँ
कैसी लगती है भाई
एक अजनबी से पूछता हूँ
वह चुपचाप चल देता है
जवाब नहीं देता
जवाब क्यों नहीं देते
मैं लोगों से पूछता हूँ
वह मेरी ओर धुंधली नज़रों से देखते हैं
और मुझे धुंध के उस पार
कुछ दिखाई नहीं देता

अपने एक मित्र से कहता हूँ
इसे छू कर तो देखो
मित्र के हाथ खुरदरे, थोड़े मैले,
मेरी कविता स्वच्छ,
सुकोमल नवजात शिशु जैसी

असहाय नज़रों से
विधाता की ओर देखता हूँ
विधाता मुस्कराता है
एक आलोचक भेज देता है

सधी उंगलियाँ, स्थिर मुस्कान लिए
आलोचक पहले कविता उलटता पलटता है
फिर एक एक धागा
खींचने लगता है
जब तक कविता
तार तार नहीं हो जाती
और मैं निृवस्त्र

शब्द् बटोरता, भावनाएँ समेटता
मैं, शब्दों के करघे पर
भावनाओं के धागों से
कविता बुनता हूँ ।

*****

– अशोक शर्मा

आज का दिन

बीते हुए कल ने भी
कुन्ती की तरह
सूर्य से, सूर्य जैसा
बेटा माँगा।

आज का दिन
बिन ब्याही माँ ने
लोक लाज से डर
पानी में बहा दिया ।

समय का कोचवान
सकुचाया नहीं
परित्यक्ता संतान को
जैसे तैसे संभाल बड़ा किया

ओजस्वी, तेजस्वी वर्तमान
अपनी ही दोपहर
के क्रोध से
तमतमाने लगा ।

सूर्य ढलते ढलते
ढल जाएगा आज
मर्यादा से जन्मे
उसके अपने ही भाई
छल कपट के तीर चला
विजयी हो घर लौटेगें ।

कल फिर कोई कुन्ती
यौवन के उन्माद में
सच्चाई की कोख से
जन्मेगी नया आज
और लोक लाज से डर
पानी में बहा देगी ।

****

– अशोक शर्मा

सन्नाटे की सुराही

मैं, सन्नाटे की सुराही पर
अंधेरे की सयाही से
एक चित्र बनाने बैठता हूं
तुम दशरथ के वाण सी
मेरे दिल के आर पार
उतर जाती हो

गहन अंधकार में भी
लक्ष्य वींध पाने की
तुम्हारी यह क्षमता
कितनी क्रूर है।

शाप भी तो नहीं दे सकता
कि मेरी तरह तुम भी
जब सदियों की प्यास लिए
तालाब किनारे पहुंचो
तो कोई तुमसे तुम्हारे
हाथ छीन ले ।

पल पल अपलक
बढ़ते देखा है तुम्हें
पुनम की रात में
भरे पूरे चाँद सी
शीतल किरनें बिखेरती
मेरे सन्नाटे की सुराही पर
चाँदी का रंग उडेलती
परियों के चित्र बनाती
तुम आजकल मेरे आकाश
पर नहीं विचरती

जब भी आती हो
बादलों में घिरी हुई
दामिनी सी कौंधती
मेरा रोम रोम जड़
कर जाती हो।

चेतना जब लौटती है
मैं एक बार फिर
सन्नाटे की सुराही पर
अंधेरे की सयाही से
चित्र बनाने बैठता हूं।

****

– अशोक शर्मा

साहस

जो ठंडी काली रात में
ठिठुर कर, थक कर
थम जाता है
जम जाता है
अंधेरे का अंश है
उसे उजाले तक नहीं पहुंचना ।

जो उमस में, तपन में,
वाष्प बन उड़ जाता है
साथ छोड़ जाता है
वह सुख नहीं है
उससे बिछुड़ने का
दु:ख कैसा ।

जो गरजता, उछलता,
चट्टानों से टकराता
चाँद की ओर लपकता है
वह मर्यादित नहीं है
आतुर है, अधीर है
हर क्षण अधूरा है ।

जो शान्त, मौन
किनारों के बीचों-बीच
स्वाभाविक गति से चलता है
न रुकता है, न उछलता,
न वाष्प बनता है, न बर्फ,
जो अंधेरे की बाहों में
बेसुध नहीं होता
साहसी है, वीर है ।

– अशोक शर्मा